नाग दमण

मूलचन्द प्राणेश

भूमिका

सांया झूला कृत 'नागदमण' १७ वीं शताब्दी में लिखी डिंगल साहित्य की उत्कृष्ट रचनाओं में से एक है। सांया झूला चारण कवि थे। आपको ईडर राज्य में राज्याश्रय प्राप्त था। बाल्यकाल में ही आपकी रुचि भगवद्भक्ति में जागृत हो चुकी थी। अवस्था के साथ-साथ इसका विकास होता गया। आपको अपनी प्रत्युत्पन्नमति तथा भक्ति भावना के कारण तत्कालीन चारण तथा राज समाज बड़े सम्मान की दृष्टि से देखता था। चारण कवि श्री सांया जी के लिखे दो ग्रंथ उपलब्ध हुए हैं—'रुक्मणी हरण' और दूसरा 'नाग-दमण' । नाग-दमण की रचना रुक्मणी-हरण के पश्चात् हुई है। कवि ने इसको अपने जीवन के उत्तरार्द्ध में लिखा है। अतः इसमें भाषा प्रांजल्य एवं भाव-प्रौढ़ता का होना स्वाभाविक ही है।

भारतीय साहित्य एवं जन-जीवन में राम और कृष्ण इन दो प्रसिद्ध अवतारों का बड़ा महत्व है। निराशा और भग्नाश हिन्दू जनता के जीवन में आशा एवं उत्साह का संचार करने हेतु मनीषी भगवद्भक्त कवियों ने इन दोनों अवतारों के जीवन की लोक-रंजन एवं लोक-मंगलकारी विविध लीलाओं का चित्रण अपने काव्य में किया है। कृष्ण की लीलाओं में नाग-दमण, नाग-लीला, कालीय लीला अथवा कमल-लीला का विशेष महत्व है। इसका वर्णन भागवत पुराण, विष्णु-पुराण, पद्म-पुराण, हरिवंश पुराण एवं ब्रह्मवैवर्त पुराण में भी प्राप्त होता है। कवि की दृष्टि विलक्षण होती है। इन विभिन्न स्थलों से प्राप्त कथासामग्री को ग्रहण कर वह अपने युग के आलोक में उसको अभिव्यक्त करता है। हिन्दी में सर्वप्रथम कालिय दमन लीला की अवतारणा कृष्ण लीला के अमर गायक महाकवि सूरदास के गीतों में हुई। नाग-दमण लीला से हिन्दी तथा गुजराती के अनेक कवि प्रभावित हुए और इन्होंने मुक्तकंठ से इस कथा प्रसंग को लेकर अनेक गीत गाए। नरसी मेहता सूरदास के समकालीन कवि थे। उन्होंने भी इस लीला का हृदयस्पर्शी चित्रण किया है। शताब्दियां अतीत के अन्धकार में विलीन हो गईं, किन्तु नरसी-कृत नाग-दमण के गीत आज भी लोगों की जबान पर सुने जाते हैं। सांया जी वैष्णव भक्ति धारा से सरसित गुजरात के ही सपूत थे। उनकी नाग-दमण रचना आज भी वहां के लोक कंठों में समायी हुई है।

नाग-दमण की गणना खंड-काव्य के अन्तर्गत आती है। प्रबंध काव्य अथवा खंड काव्य के प्रारम्भ में मंगलाचरण एक काव्य परम्परा रही है। मंगला-चरण तीन प्रकार के होते हैं— (१) नमस्कारात्मक, (२) आशीर्वादात्मक एवं (३) वस्तुनिर्देशात्मक। इस काव्य का प्रारम्भ भी निम्नलिखित पंक्तियों से होता है—

वळ वो सादर वरणवूं, सारद करौ पसाय।
पवाडौ पन्नगां सिरै, जदुपति कीधौ जाय॥

कवि मंगलाचरण की प्रथम पंक्ति में बुद्धि की अधिष्ठात्री मातेश्वरी शारदा से कृपारूप आशीर्वाद की याचना करता है ताकि वह कालिय नाग के सिर पर चढ़कर कृष्ण द्वारा किए गए युद्ध चरित्र का गान कर सके। दूसरी पंक्ति कथा वस्तु की ओर निर्देश करती है। इसमें आशीर्वादात्मकता के साथ वस्तु निर्देशन भी है। अतः इस मंगलाचरण को आशीर्वादात्मक वस्तु निर्देशक मंगलाचरण कहना ही उचित होगा।

'नाग-दमण' का कथानक पौराणिक है। इस पौराणिक कथा के माध्यम से कवि अपनी युगानुकूल भावनाओं की अभिव्यक्ति करता है। सांया झूला मुगल-बादशाह अकबर के समकालीन थे। इतिहासकारों ने अकबर के शासनकाल को उत्तम बताने में कोई संकोच नहीं किया है। ऊपर की दृष्टि से अकबर का शासन चाहे भव्य एवं शानदार रहा हो, परन्तु सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से उत्तम नहीं कहा जा सकता। समाज गरीबी एवं दैन्य का शिकार था। तुलसीदास जी की पंक्तियां भी यही बताती हैं—"भिखारी को न भीख, न चाकर को चाकरी।" दीनइलाही धर्म की स्थापना के साथ-साथ हिन्दू संस्कृति का लोप होना प्रारम्भ हो गया था। मुगल बादशाहों द्वारा हिन्दू संस्कृति एवं समाज पर शनैः शनैः होने वाले इस पदाघात की ओर भक्त कवियों का ध्यान गया और उन्होंने अपने काव्य के माध्यम से संस्कृति उद्धार एवं समाज कल्याण के गीत सुनाने प्रारम्भ किए।

भारतीय ग्रामीण समाज में पशु-धन का बड़ा महत्व है। पशु-धन में भी गौ-धन का विशिष्ट स्थान है। समाज की संपन्नता तथा विपन्नता का मापदण्ड पशुओं की संख्या ही है। मुगल शासनकाल में गौ-हत्या का प्रचलन था। उदार मुगल बादशाहों के गौ-हत्या-निषेधाज्ञाओं की अवहेलना मुगल सामंतों द्वारा होती रहती थी। सांया-झूला ने नाग-दमण में गौ-महत्ता के प्रसंग की काल्पनिक सृष्टि कर इस पशु-धन की रक्षा का स्पष्ट संकेत किया है। नागरानी को स्वयं श्रीकृष्ण कहते हैं कि—

चवै मात, भ्राता बिन्है धेन चारौ, वहै आज ते नागणी मूझ वारौ।
सुरंभी तणी नागणी ऊंच सेवा, गळै अघ्घ ओघां खुरी खेह ग्येवा॥

अघ-विनाशिनी मोक्ष-दायिनी गौ के सांस्कृतिक स्वरूप को बताने के पश्चात् कवि कृष्ण से इस पशु के आर्थिक महत्व पर भी प्रकाश डलवाता है। गौ-रस से क्या नहीं बनता? अनेक तरह के खाद्य पदार्थ तैयार किये जाते हैं। व्रज के पेड़े, मिश्री मावा तो आज भी प्रसिद्ध हैं।

दही दूध राबां ची आ सुखदाई, मठा घोळियां खांड खोहां मळाई।

औद्योगिक विकास का आकांक्षी आज का भारत यंत्र युग में श्वांस ले रहा है, परन्तु कवि के समय का भारत गोबर युग में था। तत्कालीन सारे आर्थिक समाज का ढांचा कृषि पर ही निर्भर था। हलकर्षण का मुख्य साधन बैल ही थे। इस सारी भारत रूपी पृथ्वी का भार बैल के कंधों पर ही था। कवि गौ के आर्थिक महत्व की चर्चा करते हुए बैलों की उपयोगिता पर प्रकाश डालता है।

अवनी तणो भारि ले कंध आयौ, जुवो नागणी ते हतौ गव्वु जायो।
खळां हळां नांगळां पांण खेती, अमै नागणी हाथ में आथ एती॥

इस महत्वपूर्ण गौधन को चराने की बारी श्री कृष्ण की है और इसकी रक्षा करना वे अपना परम धर्म समझते हैं। कालिय नाग ने यमुना के सारे जल को विषाक्त कर दिया है। इस जल का पान करने से गौ बछड़े सब मर जाते हैं। गौ-हत्यारे इस कालिय को मार कर गौओं को बचाना ही कृष्ण अपना परम कर्तव्य समझते हैं। इस काव्य के माध्यम से कवि परोक्ष रूपेण यही कहना चाहता है कि अत्याचारियों द्वारा मारी जाने वाली गौ या पशु-धन का संरक्षण करना हर भारतीय कृष्ण का प्रथम कर्तव्य है।

इसके अतिरिक्त कवि वैष्णव भक्त है। इस कथा के माध्यम से वह अपनी भक्ति-भावना का प्रकाशन करता है। कृष्ण जीवन की इस माधुर्य भरी ओजस्वी लीला का गान करना ही कवि का लक्ष्य है।

प्राचीन आचार्यों ने शास्त्रीय दृष्टि से काव्य के अनेक भेद किए हैं। मुख्य भेद प्रबन्ध और मुक्तक हैं। कथा-बंध की दृष्टि से प्रबन्ध काव्य को भी दो भागों में बांटा गया है—महाकाव्य और खंड काव्य। नाग-दमण की रचना कृष्ण जीवन की एक विशिष्ट कालिय-दमन की घटना को लेकर हुई है। अतः इसकी गणना खंड काव्य में ही करना समीचीन है। वीरगाथा काल में रस प्रधान कथा काव्य को 'रासो' नाम से अभिहित किया जाता था। मराठी और डिंगल साहित्य में एक 'पवाड़ा' नामक काव्य का प्रकार भी पाया जाता है। पवाड़ा उस काव्य को कहते हैं जिसमें युद्ध-चरित्र का गान हो। 'नाग-दमण' रचना को भी पवाड़ा की संज्ञा दी जा सकती है। कवि ने भी ग्रंथारंभ में इस चरित्र को पवाड़ा संज्ञा से अभिहित किया है—

पवाडौ पन्नगां सिरै, जदुपति कीधौ जाय।

पवाड़ा वीर रस प्रधान काव्य होता है। वीर रस का स्थायी भाव उत्साह है। कवि की भक्ति भावनायें इस काव्य में स्थान स्थान पर प्रकट हुई हैं। काव्य में भक्ति भावना के प्राचुर्य एवं प्राबल्य को देखने से स्पष्ट परिलक्षित होता है कि 'पवाड़ा' गायक अपने भक्त कवि को नहीं दबा सका है। भक्ति में शान्त रस रहता है। इस काव्य-कथा की समाप्ति कालिय को व्रज-वीथिकाओं में घुमाकर, नंद के आंगन में फिराने के साथ होती है—ताकि वहां की रजस्पर्श से उसकी देह चिन्ता दूर हो जावे—अर्थात् उसको मुक्ति मिले। इस प्रकार इस लघु-कथा काव्य का पर्यवसान

शान्त भाव के साथ होता है।

प्राचीन आचार्यों ने काव्य की परिभाषा करते हुए रस को ही काव्य की आत्मा बताया है। नाग-दमण भक्ति भावना से प्रेरित होते हुए भी वीर रस प्रधान काव्य है। ग्रन्थ के प्रारम्भ में मंगलाचरण करने के पश्चात् कवि दूसरे ही छन्द में कृष्ण के साहसपूर्ण कार्यों को याद करता है।

प्रभू घणां चा पाड़िया, दैत्य वडां चा दंत।
के पालणै पोढ़ियां, के पय पान करंत॥

अतः इस काव्य को भक्ति भावना से प्रेरित पवाड़ा काव्य कहें तो कोई अनुचित नहीं होगा।

काव्य की कथा का प्रारम्भ माता यशोदा द्वारा सोये कृष्ण का गो-चारण के लिए जगाने से होता है। कृष्ण और ग्वाल-बाल हर्षित होकर जंगल में जाते हैं। यमुना के किनारे गौएं घास चर रही हैं। सारा गोप-समाज खेल खेलने को आतुर है। कृष्ण इस टोली के नायक हैं। चारों तरफ उत्साह और उमंग का वातावरण है। देखते ही देखते दड़ी-गेडिये का खेल प्रारम्भ हो जाता है। उत्साह में आकर खिलाड़ी ने जोर से टोरा (hit) लगाया और गेंद यमुना में जा पड़ी। यमुना में महा-पराक्रमी कालिय नाग का निवास है। गेंद उसके आवास में पहुंच गई। वहां से गेंद लेकर आना साधारण काम नहीं। सारा बाल समाज स्तब्ध एवं बेचैन है। कृष्ण के हृदय में वीरत्व जागृत हुआ। गौ-हत्यारे कालिय को मारने का उपयुक्त अवसर जानकर वे यमुना के नाग-कुंड में कूद पड़े। यहीं से दड़ी-गेडिये खेल की समाप्ति तथा दूसरा खेल कृष्ण-कालिय-युद्ध प्रारम्भ होता है।

कृष्ण के नाग-कुण्ड में कूदते ही वातावरण में परिवर्तन आता है। बाल-सुलभ क्रीड़ा से उत्पन्न हर्षोल्लास का वातावरण विषाद और भय में बदल जाता है। इस घटना से ग्वाल-बाल तथा नगर-निवासियों में जो खलबली मची उसका प्रभावपूर्ण वर्णन निम्नांकित पंक्तियों में देखिए।

जदूनाथ काळी समी व्हाथ जोड़ै, घणी भोम चाली चढी वात घोड़ै।
ऊभा गाय गोवाळ झूरंत आरै, हा हा कार हक्कार संसार सारै॥

यह दुखद समाचार माता यशोदा के कानों में भी पड़ा। इसे सुनते ही माँ के ममता भरे हृदय पर आघात पहुंचा। उसका दिल टूट गया, शारीरिक शक्ति नष्ट हो गई। वह धड़ाम से गिर पड़ी। चतुर सखियां घटनास्थल पर माता यशोदा को ले गईं। यशोदा में अधिक चलने की शक्ति अब कहां थी? वह तो रास्ते में ही थक गई। कवि ने पुत्र-शोक से विह्वल माता यशोदा के विलाप का बड़ा ही मार्मिक वर्णन किया है।

सुण्यौ वात आघात माता सनेही, जसोदा ढळी कद्दळी खंभ जेही।
संबाहै सखी लार हाली सयाणी, रहावी विचालै थकी नंद राणी॥

× × ×

बिहूं लोचनै नीर धारा बहंती, कनैयो कनैयो यशोदा कहंती।
कालिंदी तणी आई लोटंत कांठै, गयो जाणि चिंतामणि रंक गांठै॥

विप्रलंभ या वियोग का काव्य में बड़ा महत्व है। कवियों की आत्मा वियोग वर्णन में खूब रमी है। भक्त कवियों में सूर और जायसी तो अपना सानी नहीं रखते। आधुनिक कवि सुमित्रानंदन पंत भी 'वियोगी होगा पहिला कवि' कह कर वियोग का महत्त्व बताते हैं। वियोग वर्णन एक ऐसा शैवाल जाल है कि उसमें उलझने के बाद उससे निकलना मुश्किल होता है। सांया झूला सिद्धहस्त कवि हैं। उन्होंने नागदमण रचना में वियोग वर्णन में दो तीन पद ही लिखे हैं। वियोग-वर्णन इस काव्य में चाहे थोड़ा हो, परन्तु जो है वह बहुत ही प्रभावोत्पादक है। कवि की कुशलता इसी में है कि वह वियोग के जंजाल में अधिक न फंस कर कथा को बड़े स्वाभाविक ढंग से आगे बढ़ाता है। वह यमुना के कछार में खड़े भय-संतप्त माता यशोदा एवं गोप समाज से पाठक का ध्यान तुरन्त हटाकर यमुना में नागकुण्ड की ओर जाते श्रीकृष्ण की ओर खींच लेता है। कृष्ण यमुना मंथन करते हुए नागराज के महल की ओर जाते दिखाई देते हैं। यह देखकर सारा गोप समाज घबरा जाता है। कृष्ण के माता-पिता तथा सभी सखा लौट आने की प्रार्थना करते हैं, परन्तु अत्याचारी कालिय को मारने की उत्कट इच्छा रखने वाले कृष्ण एक भी नहीं सुनते। वे गहरे पानी में बैठ कर नागराज के महल में पहुँच जाते हैं। महल में नागराज सोया हुआ है। नागरानियाँ अपने कक्ष में बैठी हैं। कृष्ण को वहां देख उसके अमलस्वरूप पर मुग्ध हो जाती हैं। कृष्ण के लोकरंजनकारी रूप चित्रण का इस काव्य में विशिष्ट स्थान है। नाग-पत्नियाँ कृष्ण रूप वर्णन करती हुई कहती हैं कि सुन्दर सलोने श्यामल रूपधारी कृष्ण के कान मुक्ता जटित कर्णाभूषण से सुशोभित हैं। शरीर पर नगान्वित पीताम्बर ओढ़े हैं। गले में मुक्ताहार, गुंजमाल तथा केहरि नख बहुत ही सुन्दर लगते हैं। बाहुओं में बंधे मणि युक्त बाजूबंध तथा सुन्दर कीमती रत्नों से जटित मणिबंध नागरानियों की दृष्टि चोर लेते हैं। हाथ की अंगुली में पहिनी मुद्रिका उनके चित्ताकर्षण का विशेष केन्द्र है। नागरानियों के मुंह से आभूषण वर्णन तत्कालीन सामाजिक वैभव एवं नारी सुलभ आभूषण प्रेम का परिचायक है। आभूषण सौन्दर्य वृद्धि का साधन है। वास्तविक सौन्दर्य तो मनुष्य की आकृति एवं मानसिक गुणों पर निर्भर करता है। कृष्ण धीरोदात्त एवं विरोचित गुणों से तो युक्त हैं ही उनके शारीरिक-सौंदर्य का चित्रण निम्नांकित पंक्तियों में देखिए।

इखै नासिका सिष्ध दीपक ऐरी, कली चंप जाणै लळी लंप केरी।
नवा नेह दीरघ्ध पंक्कज नेत्रै, सोभा मीन खंजन मृगा सहेत्रै॥

कृष्ण के श्याम सलोने रूप पर मुग्ध नागरानियां कृष्ण की उपस्थिति से विस्मित हैं। कृष्ण के प्रति उनके हृदय में सहानुभूति जागृत होती है। वे पूछती हैं—अरे, तू यहां कहां से आ गया, यहां क्या काम है? क्या तू रास्ता भूलकर सर्प के घर आ गया है? हाय-हाय, आज यह बकरी बाघ की गुफा में कहां से चली आई? इस प्रकार नागरानियां बहुत समझाती हैं, डराती हैं परन्तु कृष्ण बिल्कुल ही पथ-विचलित नहीं होते। बड़े आत्मविश्वास के साथ वह कहते हैं—'मैं कबसे प्रतीक्षा में खड़ा हूं।' हे नागिन! तुम जाओ और जल्दी ही नागराज को जगादो। आज हम यहीं अखाड़ा रचेंगे। युद्ध में हार-जीत तो भगवान के हाथ है।

युद्ध वर्णन हिन्दी के आदि-साहित्य की एक बहुत बड़ी विशेषता है। युद्धों का सजीव एवं

सांगोपांग चित्रण वीरगाथा-काल जैसा अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। भक्त कवि सांया जी ने प्रस्तुत रचना में युद्ध वर्णन को स्थान दिया है। युद्ध में विजय के महत्त्व का अनुभव कराने हेतु विजित के शौर्य और पराक्रम का दिग्दर्शन कराना नितान्त आवश्यक है। नागदमण में युद्ध कृष्ण एवं नागराज के बीच हुआ है। कवि ने नागराज के शौर्य का वर्णन नागरानियों के मुंह से ही करवाया है—

इसो आज ते कौण भूलोक आछै, काळी नागसूं जुध्ध संग्राम काछै।
चढै कूंण काळी तणी सीम चांपै, काळी नाग हूं आज ही कंस कांपै॥

अपने युग के महापराक्रमी योद्धा कंस को कंपा देने वाले कालिय नाग की भीषणता का वर्णन तो अत्यन्त दर्शनीय है।

जाळै बिखख नीला बहै विखख झाळा, वदन्नै सहस्सै वधै व्योम व्याळा।
वडा श्रृंग सीतंग हेमंग वाळा, जिरी फूंक आगै भरै टूंक फाळा॥

इस दुर्द्धर्ष भयानक नागराज को कौन जगावे? कैसे जगावे? यह गंभीर प्रश्न सभी के सामने खड़ा हो गया। आखिर नागरानी के अनुरोध पर स्वयं कृष्ण ने मुरलीवादन शुरू किया। मुरली का स्वर सप्तपाताल भेदी था, उसका स्वर स्वर्ग देवताओं को भी सुनाई पड़ा। इस महानाद को सुनकर दुष्टों का हृदय कंपायमान हो उठा। व्रज निवासी इस स्वर से अमृत-पान करने लगे। इस महा-भयानक सिन्धु राग को सुनकर अत्यन्त क्रोधित, समस्त फणों को ऊंचा उठाए, फुंकार करते हुए नागराज अपने दरबार में आया और उसने कृष्ण को अपनी पूंछ के परकोटे में घेर लिया। डक् डक् करते कालिय ने कृष्ण पर प्रहार करने प्रारम्भ किये। कृष्ण के हाथ कालिय नाग की गर्दन के पास थे। वह एक गारुड़ी की तरह दिखाई देते थे। इस द्वंद्व युद्ध को देखने सारा नाग समाज एकत्रित हो गया। नागरानियां भी वहां उपस्थित थीं। कोई भी भारतीय नारी अपने सामने किसी अन्य पुरुष द्वारा पति को अपमानित होते तथा पीटे जाते हुए नहीं देख सकती। किसी पुरुष को उसकी पत्नी के सामने अपमानित करना उस नारी का निरादर करना है। इसी कारण कृष्ण कालिय को उसके दरबार से बाहर निकालकर यमुना के गहरे पानी में ले गए। वहां श्रीकृष्ण ने अपने प्रहारों से नाग को बुरी तरह घायल किया—

मचै मूठ मारा झरै श्रोण झारा, फणांरा घणांरा करै फूत्रकारा॥

इस जबरदस्त मार को सहने की शक्ति कालिय में न रही। यह आर्तनाद कर उठा। श्रीकृष्ण के प्रहारों से वह बेहोश हो गया और छोटी नाव की तरह पानी में तैरने लगा। कालिय एक अत्याचारी नाग था। अत्याचारी के मरने पर सुर, नर आदि सभी को खुशी होती है।

श्री कृष्ण के हाथ में कालिय नाग का सिर देखकर देवगण भी अपने रथों को रोक कर खड़े हो गए।

वीर काव्य में युद्ध-सामग्री का भी बड़ा महत्व है। कवि ने कृष्ण, नागरानी संवाद में समरोचित सामग्री का भी वर्णन किया है। तत्कालीन युद्ध में हय-दल, पैदल, हस्तीदल आदि का

होना आवश्यक था। इसके अतिरिक्त शरीर रक्षार्थ बाजूबन्द तथा बख्तर का भी महत्त्व था। अनेकानेक शस्त्रों का प्रयोग उस समय किया जाता था। नीचे की पंक्तियों में कवि ने युद्ध सामग्री में अनेक शस्त्रास्त्र एवं वाद्यों के नाम बताये हैं।

फिरै डंबरी सैन्य नाहीं फरस्सी, कंडै चौल कट्टार कस्सो न कस्सी।
टंकारी न भारी न अढारटांकी, पाषणं न बाणं न कमाण बांकी॥
नफेरी न भेरी न निस्साण-नद्दा, रिणंतूर बाजै न गाजै रवद्दा॥

अतः उपर्युक्त वर्णन के आधार पर यह तो निःसंकोच कहा जा सकता है कि कवि को युद्ध एवं युद्धोचित सामग्री का ज्ञान था। इसके साथ-साथ यह कहने में भी संकोच अनुभव नहीं करना चाहिए कि कवि की आत्मा कृष्ण कालिय द्वंद्व-युद्ध चित्रण में अधिक नहीं रमी है। इसका मूल कारण संभवतः कवि का भक्त होना है। भक्त कवि इस युद्ध में एक क्षण के लिए भी अपने आराध्यदेव को कष्ट में देखना नहीं चाहता। इसीलिए कालिय के प्रहार कृष्ण को फूल-छड़ी की तरह मालूम हो रहे हैं।

सांया-झूला प्रधानतः भक्त कवि हैं। यद्यपि इन्होंने ग्रंथारंभ से ही उत्साहपूर्ण वातावरण में बालकृष्ण के शौर्य एवं पराक्रमपूर्ण कार्यों का चित्रण किया है, समग्र ग्रंथ का सम्यक् अवलोकन करने के बाद फिर भी इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि शौर्य-गान गायक कवि भक्त हृदय पर विजय नहीं पा सका। भक्त कवि ने इस ग्रन्थ में स्थान-स्थान पर बालकृष्ण पर देवत्व का आरोप किया है, क्ह दूसरों को जीवन-मरण के बंधन से मुक्त कराने वाला है। 'अवनी भार उतारवा जाग्यो एण जुगत्ति' कहकर कवि ने ग्रन्थ के प्रारम्भ में ही कृष्ण को अवतार मान लिया है। कवि सामान्यतः बालक कृष्ण का वर्णन करते हुए पाठक को एक उत्साही, पराक्रमी तथा वाक्-चतुर बालक का परिचय देता है। यह परिचय देते देते कवि के अन्तर्मन में सोयी भक्ति-भावना जागृत होती है और अनेक प्रसंगों की सृष्टि कर बाल-कृष्ण के ईश्वरत्व की ओर संकेत करता है। कृष्ण के बाल रूप पर मुग्ध होकर नागरानियों ने सहानुभूतिवश कालिय से बचाने के लिए जब कृष्ण को अपने महलों में छिपने के लिए कहा तो स्वयं श्रीकृष्ण ने निम्नांकित पंक्तियों में अपने आपको विराट बताया है।

रहां तो घरै दाव दूजै रहावूं, मोरो घाट वैराट एथै न मावूं।

कृष्ण पार्थिव रूप में तो मथुरा में रहते हैं, परन्तु वास्तव में उनका निवास तो भक्तों के हृदय में है—'अमारा भगत्ता तणां एह ओरा' पंक्तियों द्वारा गीता के इस प्रसिद्ध कथन की याद दिलाई है—'नाऽहं वसामिवैकुंठे भक्त हृदये वसाम्यहम्।' इसी प्रकार नागरानी संवाद, नागरानियों द्वारा कृष्ण पूजा, नारद द्वारा स्तुति गान आदि अनेक ऐसे प्रसङ्ग कृष्ण के देवत्व की ओर संकेत करते हैं। सारा का सारा ग्रंथ कवि की भक्ति-भावना से भरा पड़ा है।

प्रकृति चित्रण का काव्य में बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है। कविगण हमेशा से ही प्रकृति की गोद में बैठकर उससे प्रेरणा प्राप्त करते रहे हैं। प्रातः, संध्या, सूर्य, चन्द्र, नदी, जंगल, पर्वत आदि अनेक प्राकृतिक उपकरणों के साथ अपना रागात्मक संबंध स्थापित कर उनके विभिन्न स्वरूपों

की अवतारणा काव्यात्मकता के वर्द्धन में सहायक होती है। प्रस्तुत रचना नाग-दमण में कवि के सामने अनेक ऐसे अवसर आये हैं जहां वह प्रकृति चित्रण कर सकता था, परन्तु ऐसा नहीं हुआ। प्रातः गोचारण को जाते समय ऊषा काल एवं उगते सूर्य का, ग्वाल बाल के खेलते समय जंगल का तथा यमुना नदी का थोड़ा बहुत चित्रण हो जाता तो अच्छा था। ऐसा प्रतीत होता है कि कवि के हृदय में प्राकृतिक सुषमा के प्रति कोई आकर्षण नहीं है। कवि युद्ध-सामग्री की परिगणना का अवसर तो नागरानी कृष्ण संवाद की रचना कर प्राप्त कर लेता है, परन्तु प्रकृति-चित्रण का सहज स्वाभाविक ढंग से अवसर प्राप्त होते हुए भी काव्य के इस पक्ष को ओर ध्यान नहीं देता।

भाषा प्रौढ़ता का निकष उसका संश्लिष्ट स्वरूप है। थोड़े से शब्दों में भावों को बांधकर रखना भाषा पर पूर्ण अधिकार रखने वाले कवियों का ही काम है। नागदमणकार का भाषा पर पूर्ण अधिकार है। इसी कारण इस काव्य में संवाद सौष्ठव एवं शब्द-चित्रों की योजना बड़ी सफलता के साथ बन पड़ी है। 'जसोदा ढली कदली खंभ जेही' में माता यशोदा की कृषता एवं गिरने का बड़ा सफल चित्रण है। 'लियां लक्कडी कंध ऊभा हुलासै' की शब्दावली पढ़ने से आंखों के सामने खेलने को आतुर खिलाड़ियों का चित्र तो खींचता ही है, परन्तु हुलासै शब्द का प्रयोग उनकी मनःस्थिति का भी परिचायक है। सूक्ष्म को स्थूल रूप देना आधुनिक युग के छायावादी कवियों की एक विशेषता रही है, परन्तु १७ वीं शताब्दी में नागदमणकार ने इसका कितनी कुशलता के साथ प्रयोग किया है, वह द्रष्टव्य है—'घणी भोम चाली चढ़ी बात घोड़ै' में बात की प्रसरण गति का चित्र-सा खड़ा हो जाता है। इसी प्रकार 'पड़ी दोतड़ी आज ही बाघ पानै' में कृष्ण की सुकुमारता तथा कालिय नाग की भयानकता का चित्रण है। 'नारी गांठियों सूंठ दूजी न खायो' में भी व्यंग्यात्मक भावों को बड़ी कुशलता के साथ बांधा गया है। 'हरी हो हरी हो हरी धेन हांकै' में गौओं को हांकने का दृश्य उपस्थित करने में तो कवि ने कमाल दिखाया है। इसके अतिरिक्त संवाद रचना में भी कवि को बड़ी सफलता मिली है। नीचे की पंक्तियों में नागरानी और कृष्ण के बीच प्रश्नोत्तर की झड़ी देखिए—

कंठा हूँत आयो अठै काज केहा, ग्रहां भूलियौ बापरौ साप गेहा।

कृष्ण उत्तर देते हैं—

भली नागणी नावियौ राह भूलौ, देवो आपरी लाज लीधौ दडूलौ॥

आगे फिर कृष्ण कहते हैं—

खट्टकै मुंहै नागणी बोल खारौ, प्रभू जागसी मूंझ पाछा पधारौ।

नागिन फिर कृष्ण को समझाती है—

काळी नाग सूं लीजिए बेगि कांनौ, पड्यौ तात सोझै चढ़ै मात पांनौ।

इस प्रकार छंद सं. ३० से लेकर छंद सं. ९३ तक में संवादों की छटा भरी पड़ी है। एक ही पद में प्रश्न, उत्तर, प्रत्युत्तर का समा-सा बंध जाता है। यह सब भाषा पर अमित अधिकार होने से ही सम्भव हो सकता है।

चित्रोपमता भी इस काव्य की अपनी विशेषता है। इस काव्य का प्रारम्भ भी मंगलाचरण के पश्चात शब्दचित्र से ही होता है। नीचे की पंक्तियों में माता यशोदा द्वारा कृष्ण को जगाने, दधिमंथन करने तथा मक्खन मांगने जैसी अनेक क्रियाओं का चित्रण देखने योग्य है।

विहाणूं नवौ नाथ जागौ वहेला, हुयो दोहिवा धेनु, गोवाळ हेला।
जगाड़ै जसोदा यदुनाथ जागै, मही माट घूमै, नवैनीत मांगै॥

अपने घर से प्रातःकाल गौओं को निकालकर चौगान में लाना और उनको चराकर लाने के लिए ग्वाले को सौंप देना ग्राम्य जीवन की दैनिक प्रक्रिया है। कवि ने इसका बहुत ही सजीव एवं मनोरम चित्र खींचा है।

हरी हो हरी हो हरी धेन हांकै, झरूखां चढी नंदकुमार झांकै।
अहिराणियां अव्वला झूल आवै, भगवान नै धेन गोप्यां भळावै॥

इकी-बेवटी चोवटै आय ऊभी, संभाली लियो श्याम मोरी सुरंभी।
हुई नंद री धेन सूं धेन हेला, भिळे वाळवा जाणि श्री गंग भेळा॥

नाग-दमण डिंगल भाषा की रचना है। इटली के सुप्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक राजस्थानी भाषा के अनन्य प्रेमी डॉ. तेस्सितोरी ने इस भाषा को अनियमित, गंवारू तथा साहित्यशास्त्र का अनुसरण न करने वाली भाषा कहा था। नाग-दमण में डिंगल के इस स्वरूप को देखने से उपर्युक्त सभी भ्रान्तियों का निवारण होता है। विद्वान सम्पादक ने इस पुस्तक के प्रथम खण्ड में इस भाषा का व्याकरण भी दिया है। प्रस्तुत रचना में डिंगल भाषा का स्वरूप बहुत ही प्रौढ़, नियमित, शिष्ट एवं व्याकरण शास्त्र-सम्मत है।

भुजंग-प्रयात छंद का प्रयोग संस्कृत काव्य में बड़ी प्रचुरता के साथ मिलता है। हिन्दी कविता ने इस छन्द को वहीं से प्राप्त किया है। डिंगल भाषा के कवियों ने संस्कृत के सभी वर्ण वृत्तों को अपनाया है फिर भी उनका सर्वाधिक झुकाव भुजंगप्रयात की ओर ही रहा है। इसका कारण इस छन्द का गति वैशिष्ट्य है। सांया जी ने इस छन्द का प्रयोग अपने इस ग्रंथ में प्रारम्भ से लेकर अंत तक बड़ी कुशलता के साथ किया है।

डिंगल के प्रसिद्ध अलंकार वयणसगाई का निर्वाह करना कोई सरल काम नहीं है। यह तो सिद्धहस्त कवियों से ही सम्भव हो सकता है। क्योंकि इसमें भाषा, छन्द, अलंकार तीनों पर समान रूप से अधिकार होना चाहिए। नागदमण में इसका सुन्दर निर्वाह हुआ है। उदाहरणार्थ निम्नांकित पद को देखिए—

मड्यौ दूसरो खेल खेलंत माथै, हिवे ऊतरी वात गोवाळ हाथै।
करै त्रीन खंडो नमंतेय कानां, जोवै धेन धद्धीक कांठै जमूनां।

उपर्युक्त छन्द के प्रत्येक चरण में प्रथम शब्द तथा अन्तिम शब्द का प्रारम्भ एक ही वर्ण से होता है। इस वर्ण-मैत्री को ही डिंगल कवि वयण-सगाई कहते हैं। देखने से यह अनुप्रास का ही एक भेद मालूम होता है। इसके अतिरिक्त उपमा, उत्प्रेक्षा, अनुप्रास आदि अलंकारों का प्रयोग

भी बड़े सुन्दर ढंग से किया है।

सारांशतः नागदमण गौ-संरक्षण का संदेश वाहक, भाषा-सारल्य, संशलिष्ट भाषा शैली, चित्रोपमता, मधुर संगीतात्मक छटा एवं नाद-सौंदर्य से विभूषित डिंगल भाषा का भक्ति भावना से पूरित एक सरस पवाड़ा काव्य है।

हिन्दी भाषा में साहित्य सृजन का प्रारम्भ सं. ७०० से शुरू हो गया था। इस १३०० वर्ष की लम्बी अवधि में भाषा स्वरूप में अनेक परिवर्तन हुए हैं। डिंगल और पिंगल ये दोनों हिन्दी भाषा के आदि स्वरूप ही हैं। इस दीर्घकाल में नाग-दमण जैसे अनेक प्रौढ़-काव्य लिखे गए होंगे। उनमें से उचित ध्यान न दिए जाने के कारण अनेक रचनायें अतीत के गर्भ में दबी पड़ी हैं। इन ग्रन्थों को खोजकर साहित्य संसार के सामने लाना साहित्यदेवता तथा माँ सरस्वती की सर्वोत्तम पूजा है। लगभग साढ़े तीन सौ साल पुरानी सांया जी कृत 'नाग-दमण' जैसी प्रौढ़ एवं सरस रचना को सटीक सम्पादन के साथ साहित्यानुरागियों के समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास स्तुत्य एवं अनुकरणीय है। इस सु-प्रयास के लिए विद्वान सम्पादक श्री मूलचन्द जी 'प्राणेश' एवं भा. वि. मं. शोध प्रतिष्ठान बधाई के पात्र हैं।

प्रिंसिपल
राजस्थान बाल भारती
बीकानेर

रामेश्वर प्रसाद पांडिया
एम. ए., बी. एड.